<u>सर्वोच्च न्यायालय प्रतिवेदन</u>

बिहार राज्य

बनाम

कृपा शंकर जायसवाल

14 अक्टूबर, 1960

(जे. एल. कपूर, पी. बी. गर्जेंद्रगडकर, के. सुब्बा राव एवं के. एन. वांचू, न्यायमूर्तिगण)

औद्योगिक विवाद — सुलह कार्यवाही — अपंजीकृत संघ — उसके साथ किया गया समझौता — क्या प्रबंधन पर बाध्यकारी है — औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14), धारा 11(2), 12(6), 18(3)(ए) और (डी)।

सुलह अधिकारी के समक्ष मनकथा डिस्टिलरी के प्रबंधन और श्रमिक संघ के बीच एक समझौता हुआ। उक्त समझौते की तिथि पर संघ, भारतीय व्यापार संघ अधिनियम के तहत पंजीकृत नहीं था। प्रबंधन द्वारा समझौते की शर्तों का पालन न किए जाने के कारण, उत्तरदाता, जो उक्त डिस्टिलरी के स्वामी थे, और प्रबंधक को अभियोजित किया गया तथा दंडाधिकारी द्वारा उन्हें दोषसिद्ध ठहराया गया। उत्तरदाता द्वारा अपील किए जाने पर सत्र न्यायालय ने दंडाधिकारी के आदेश की पुष्टि कर दी। उत्तरदाता द्वारा पटना उच्च न्यायालय में की गई अपील पर, उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि के आदेश को अपास्त कर दिया और उत्तरदाता को बरी कर दिया। उच्च न्यायालय ने यह माना कि वहाँ कोई मान्यता प्राप्त संघ नहीं था और चूँकि सुलह अधिकारी ने उचित सूचना दिए बिना डिस्टिलरी का दौरा किया था, इसलिए 18-3-1954 को एक पक्ष के रूप में स्वामी और दूसरे पक्ष के रूप में संपूर्ण श्रमिकों के बीच कोई समझौता नहीं हो सकता था। न्यायालय ने यह भी कहा कि यह मानना गलत था कि केवल इसलिए कि कुछ श्रमिकों ने समझौते पर हस्ताक्षर किए थे, वह सभी श्रमिकों पर बाध्यकारी होगा।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि: किसी विवाद के औद्योगिक विवाद होने के लिए यह अनिवार्य शर्त नहीं है कि वह किसी मान्यता प्राप्त संघ द्वारा प्रायोजित हो या किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान के सभी श्रमिक उसमें पक्षकार हों। सुलह कार्यवाही के दौरान किया गया समझौता औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 18(3)(ए) और (डी) के दायरे में आता है और इस नाते यह सभी श्रमिकों पर बाध्यकारी होता है, भले ही वह विवाद किसी अपंजीकृत संघ द्वारा या केवल कुछ ही श्रमिकों द्वारा उठाया गया हो।

सुलह अधिकारी द्वारा धारा 11(2) के तहत अधिसूचना न दिया जाना सुलह अधिकारी की अधिकारिता को प्रभावित नहीं करता है; इसका एकमात्र उद्देश्य प्रतिष्ठान को यह सूचित करना है कि आने वाला व्यक्ति सुलह अधिकारी है, कोई बाहरी व्यक्ति नहीं। 14 दिनों के भीतर प्रतिवेदन प्रस्तुत न करने के संबंध में धारा 12(6) का कोई भी उल्लंघन सुलह अधिकारी के कर्तव्य की चूक हो सकती है; किंतु यह उन कार्यवाहियों की वैधता को प्रभावित नहीं करता है जो अधिनियम की धारा 20(2) के प्रावधानों के अनुसार समाप्त हुई हैं।

जहाँ पक्षकारों के बीच एक नया समझौता हो जाता है और सभी विवाद सुलझ जाते हैं, तो "जनहित के लिए यह आवश्यक नहीं है कि पुराने पड़ चुके मामले को पुनर्जीवित किया जाए।"

न्यूज़पेपर्स लिमिटेड, इलाहाबाद बनाम स्टेट इंडस्ट्रियल ट्रिब्यूनल, उत्तर प्रदेश, [1960] 2 एल.एल.जे. 37, का संदर्भ दिया गया।

अंधेरी मरोल कुर्ला बस सर्विस बनाम बॉम्बे राज्य, ए.आई.आर. [1959] एस.सी. 841 और *बिहार राज्य बनाम हीरालाल केजरीवाल,* [1960] 1 एस.सी.आर. 726, को अनुमोदित किया गया।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1959 की आपराधिक अपील संख्या 83

पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 25 जुलाई, 1958 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील, जो कि 1958 की आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 593 और 594 से संबंधित है, जो

अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, मुंगेर द्वारा आपराधिक अपील संख्या 286 (वर्ष 1956) में पारित दिनांक 3 मार्च, 1958 के निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है।

डी. पी. सिंह और *आर. एच. ढेबर*, अपीलकर्ता की ओर से।

सी. पी. लाल, उत्तरदाता की ओर से।

1960, 14 अक्टूबर। न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति कपूर द्वारा सुनाया गया:

न्यायमूर्ति कपूर — यह अपील पटना उच्च न्यायालय के दोषमुक्ति के निर्णय और आदेश के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 134(1)(सी) के तहत प्राप्त प्रमाणपत्र के अनुसरण में लाई गई है।

मनकथा डिस्टिलरी के श्रमिकों और उसके प्रबंधन, जिसके स्वामी उत्तरदाता हैं, के बीच कुछ विवाद थे। 23 नवंबर, 1953 को डिस्टिलरी के श्रमिकों की ओर से सहायक श्रम आयुक्त, भागलपुर को एक याचिका प्रस्तुत की गई थी, जिस पर बनारसी चौधरी नामक व्यक्ति ने अपनी ओर से और डिस्टिलरी के श्रमिकों की ओर से हस्ताक्षर किए थे। इस याचिका में श्रमिकों की कुछ शिकायतों का विवरण दिया गया था। सुलह कार्यवाहियाँ शुरू की गईं और 5 दिसंबर, 1953 को एक समझौता हुआ, जिसे उच्च न्यायालय ने 'एक प्रकार का समझौता' कहकर वर्णित किया है।

12 जनवरी, 1954 को, भारतीय व्यापार संघ अधिनियम के तहत डिस्टिलरी के श्रमिकों के संघ के पंजीकरण हेतु एक आवेदन किया गया था, और 23 मार्च, 1954 को इसे 'मनकथा डिस्टिलरी मज़दूर पंचायत' के नाम से पंजीकृत किया गया। डिस्टिलरी को बंद कर दिया गया था और श्रमिकों को सेवामुक्त कर दिया गया था, और इसके पश्चात 19 फरवरी, 1954 को, मनकथा डिस्टिलरी मज़दूर पंचायत के महासचिव ने, यद्यपि उस समय यह संघ पंजीकृत नहीं था, प्रबंधन को एक पत्र भेजा जिसमें बिना मुआवज़ा दिए श्रमिकों को सेवामुक्त किए जाने का विरोध किया गया था और अन्य श्रमिकों को काम पर रखकर कारखाने को पुनः शुरू करने की नियोक्ताओं की मंशा पर आपत्ति जताई गई थी। उसमें यह भी कहा गया

था कि जिन श्रमिकों को सेवामुक्त किया गया था, वे कई वर्षों से काम कर रहे थे और ऐसे श्रमिकों की एक सूची पत्र के साथ संलग्न की गई थी। इस पत्र का निम्नलिखित अंश इस अपील के प्रयोजनों के लिए प्रासंगिक है:-

"नीचे नामोद्दिष्ट सभी व्यक्ति कारखाने में विधिक तरीके से, मासिक वेतन पर स्थायी आधार पर कार्य करेंगे। न केवल यह आशा है, बल्कि पूर्ण विश्वास है कि आप उपरोक्त तथ्यों पर विचार करेंगे और सहर्ष उन्हें स्वीकार करेंगे।

संतोषजनक उत्तर मिलने पर, वे सभी श्रमिक जो वर्षों से आपके कारखाने में काम कर रहे थे, स्वयं ड्यूटी पर उपस्थित होंगे और आपके आदेशानुसार कार्य करेंगे।"

यद्यपि यह पत्र डिस्टिलरी के स्वामियों को संबोधित है, ऐसा प्रतीत होता है कि इसे सहायक श्रम आयुक्त, भागलपुर को भेजा गया था, जहाँ यह 25 फरवरी, 1954 को प्राप्त हुआ। इस पत्र पर निम्नलिखित पृष्ठांकन किए गए थे:—

"आपसे चर्चा हुई। प्रबंधन से अनुरोध है कि वह 10 मार्च, 1954 को पूर्वाह्न 11 बजे सुलह कार्यवाही में उपस्थित हो। संघ को भी तदनुसार सूचित कर दिया गया है।"

5 मार्च, 1954 दिनांकित एक अन्य याचिका डिस्टिलरी मज़दूर पंचायत के महासचिव द्वारा सहायक श्रम आयुक्त को भेजी गई थी, जिसमें उन सभी व्यक्तियों के नामों का उल्लेख किया गया था जिन्हें स्वामियों द्वारा नए सिरे से नियुक्त किया गया था, और यह प्रार्थना की गई थी कि कारखाने के बंद होने के समय जिन लोगों को सेवामुक्त किया गया था, उन्हें बहाल किया जाए और वेतन का भुगतान किया जाए। साथ ही सहायक श्रम आयुक्त से यह अनुरोध किया गया था कि वे स्वयं आकर स्थिति का अवलोकन करें और श्रमिकों को बहाल करवाएँ। इस याचिका पर आदेश इस प्रकार था:—

"पक्षकारों को कल मेरे कार्यालय में सुलह के लिए बुलाया गया है। कार्यवाही के परिणाम की प्रतीक्षा की जा सकती है।"

18 मार्च, 1954 को प्रबंधन और श्रमिकों के बीच एक समझौता हुआ, जिस पर औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का अधिनियम 14) (जिसे इसके बाद संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 4 के तहत नियुक्त सुलह अधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे। इस दस्तावेज़ पर डिस्टिलरी के स्वामी और प्रबंधक द्वारा, तथा श्रमिक पंचायत के महासचिव बनारसी चौधरी और पंचायत के छह अन्य सदस्यों द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे, जो स्पष्टतः पंचायत की कार्यकारी समिति के सदस्य थे। समझौते की शर्तें निम्नलिखित थीं:

"1. यह सहमति हुई है कि अनुसूची "ए" में नामित श्रमिकों को उनकी सेवाओं में बिना किसी व्यवधान के काम पर वापस रखा जाएगा।

2. कारखाने के बंद होने के बाद नियुक्त किए गए नए कर्मियों को सेवामुक्त कर दिया जाएगा।

3. यदि तीन पालियां शुरू होती हैं और कारखाने में रोजगार का कोई अन्य अतिरिक्त अवसर उपलब्ध होता है, तो प्रबंधन केवल उन श्रमिकों को नियोजित करेगा जो आज शेष रह गए हैं और जिन्होंने अगस्त 1953 और सितंबर 1953 में काम किया था, और यह नियुक्ति वरिष्ठता के क्रम में होगी।

4. श्री बनारसी चौधरी, बाल्मीकि सिंह, भसो सिंह और कल्टू (?) सिंह मुंगेर स्थित न्यायालय में लंबित एक मामले में आरोपी हैं। प्रबंधन इस बात पर सहमत है कि यदि वे न्यायालय द्वारा दोषमुक्त कर दिए जाते हैं, तो उन्हें काम पर रख लिया जाएगा।

5. सभी श्रमिकों को पहले की तरह ही स्थायी आधार पर रखा जाएगा। मिल के खुलने के बाद उन्हें अस्थायी आधार पर रखने का आदेश रद्द किया जाता है।

6. कारखाने के पुनः खुलने के बाद, बकाया का भुगतान वर्तमान की साप्ताहिक व्यवस्था के बजाय पहले की तरह मासिक आधार पर किया जाएगा।

7. श्रमिकों द्वारा उठाई गई और दिनांक 5 दिसंबर, 1953 के समझौते के अंतर्गत आने वाली शिकायतों का निर्णय श्रम आयुक्त, बिहार, पटना द्वारा किया जाएगा और उनका निर्णय पक्षकारों के लिए स्वीकार्य तथा अंतिम होगा।

8. कारखाने का कार्य तत्काल पुनः प्रारंभ किया जाएगा।

9. श्रमिकों को वे सभी लाभ और विशेषाधिकार मिलते रहेंगे जो कानून, प्रचलन और परंपरा द्वारा सुनिश्चित किए गए हैं।

10. श्रमिकों को उनकी व्यापार संघ की गतिविधियों के लिए प्रताड़ित नहीं किया जाएगा।"

अभियोजन का मामला यह है कि समझौते की शर्तों का पालन नहीं किया गया था, क्योंकि न तो पुराने श्रमिकों को पुनः काम पर रखा गया और न ही नए नियुक्त श्रमिकों को सेवामुक्त किया गया। इसके परिणामस्वरूप, बिहार सरकार की मंजूरी प्राप्त करने के बाद श्रम अधीक्षक श्री एल. डी. सिंह द्वारा दायर एक परिवाद पर उत्तरदाता और डिस्टिलरी के प्रबंधक, राम नारायण लाल पर मुकदमा चलाया गया। दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया गया और प्रत्येक को 150 रुपये के जुर्माने या जुर्माना न भरने की स्थिति में एक महीने के साधारण कारावास की सजा सुनाई गई। विद्वान दंडाधिकारी ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह अधिनियम के अर्थ के अंतर्गत एक 'औद्योगिक विवाद' था, और 18 मार्च, 1954 का सुलह समझौता एक वैध समझौता था तथा उत्तरदाता समझौते की पहली शर्त को लागू करने में विफल रहा। इस आदेश के विरुद्ध सत्र न्यायालय में अपील की गई और तृतीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने अपील खारिज कर दी। उन्होंने विद्वान दंडाधिकारी के निष्कर्षों की पुष्टि की।

सत्र न्यायाधीश के इस आदेश के विरुद्ध, केवल उत्तरदाता द्वारा उच्च न्यायालय में अपील की गई, और उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि के आदेश को अपास्त कर दिया तथा अभियुक्त को बरी कर दिया। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि कोई मान्यता प्राप्त संघ नहीं था, यद्यपि "एक प्रकार का अस्पष्ट संघ" अस्तित्व में था, और चूँकि सुलह

अधिकारी ने उचित सूचना दिए बिना डिस्टिलरी का दौरा किया था, इसलिए "18-3-1954 के सुलह अधिकारी के निर्णय को अधिकारिता विहीन माना जाना चाहिए"। न्यायालय का यह भी मत था कि एक पक्ष के रूप में स्वामी और दूसरे पक्ष के रूप में संपूर्ण "श्रमिकों" के बीच कोई समझौता नहीं हुआ था, और "यह मानना हास्यास्पद है कि केवल इसलिए कि कुछ श्रमिकों ने समझौते पर हस्ताक्षर किए थे, वह सभी श्रमिकों पर बाध्यकारी होगा। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस समझौते में एक गंभीर त्रुटि है जिसे 18-3-1954 के सुलह अधिकारी के निर्णय के रूप में वर्णित किया गया है।" अतः, इस आधार पर कि यह समझौता उत्तरदाता पर बाध्यकारी नहीं था, दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया गया।

यह कहना एक त्रुटिपूर्ण दृष्टिकोण होगा कि किसी विवाद के 'औद्योगिक विवाद' होने के लिए यह एक अनिवार्य शर्त है कि उसे किसी मान्यता प्राप्त संघ द्वारा प्रायोजित किया जाना चाहिए या किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान के सभी श्रमिक उसमें पक्षकार होने चाहिए। कोई विवाद तब भी 'औद्योगिक विवाद' बन जाता है जब वह किसी ऐसे संघ द्वारा प्रायोजित हो जो पंजीकृत नहीं है, जैसा कि वर्तमान मामले में है, या जहाँ विवाद केवल कुछ श्रमिकों द्वारा ही उठाया गया हो; क्योंकि दोनों ही स्थितियों में मामला अधिनियम की धारा 18(3)(ए) और (डी) के अंतर्गत आता है। देखिए: *न्यूज़पेपर्स लिमिटेड, इलाहाबाद बनाम स्टेट इंडस्ट्रियल ट्रिब्यूनल, उत्तर प्रदेश*[1]। 18 मार्च, 1954 को सुलह कार्यवाही के दौरान जो समझौता हुआ था, उस पर संघ के महासचिव और कार्यकारी समिति के सदस्यों द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे, भले ही वह संघ उस समय अपंजीकृत था। अतः, हम इस निर्णय से सहमति व्यक्त नहीं कर सकते कि 18 मार्च, 1954 का समझौता पक्षकारों के बीच बाध्यकारी नहीं था।

हमारे समक्ष धारा 11(2) के विस्तार और प्रभाव का प्रश्न उठाया गया और यह तर्क दिया गया कि चूंकि सुलह अधिकारी ने 18 मार्च, 1954 को डिस्टिलरी में आने से पहले कोई उचित सूचना नहीं दी थी, इसलिए वह समझौता एक विधिक समझौता नहीं था और

---

1 [1960] 2 एल.एल.जे. 37, पृष्ठ 38 पर

परिणामस्वरूप पक्षकारों पर बाध्यकारी नहीं था, और इसके उल्लंघन पर अधिनियम की धारा 29 के दंडात्मक परिणाम लागू नहीं हो सकते। अब, धारा 11(2) यह प्रावधान करती है:

"कोई सुलह अधिकारी या बोर्ड या न्यायालय का सदस्य अथवा श्रम न्यायालय, अधिकरण या राष्ट्रीय अधिकरण का पीठासीन अधिकारी, किसी विद्यमान या संभावित औद्योगिक विवाद की जांच के प्रयोजन के लिए, उचित सूचना देने के बाद, उस विवाद से संबंधित किसी प्रतिष्ठान के कब्जे वाले परिसर में प्रवेश कर सकता है।"

धारा 11 केवल सुलह अधिकारियों की प्रक्रिया और शक्तियों से संबंधित है और उप-धारा (2) सुलह अधिकारी को उचित सूचना देने के बाद उस प्रतिष्ठान के कब्जे वाले परिसर में प्रवेश करने के लिए अधिकृत करती है जिससे विवाद संबंधित है। यह सूचना केवल किसी विद्यमान औद्योगिक विवाद या संभावित औद्योगिक विवाद की जांच करने के लिए परिसर में प्रवेश करने के प्रयोजन के लिए है, और इसका उद्देश्य मात्र प्रतिष्ठान को यह अवगत कराना है कि आने वाला व्यक्ति सुलह अधिकारी है, न कि कोई पूर्णतः अजनबी व्यक्ति जिसका अधिनियम के प्रयोजनों के लिए स्थापित तंत्र से कोई संबंध नहीं है। अतः, धारा 11(2) के तहत सूचना का अभाव सुलह अधिकारी की अधिकारिता को प्रभावित नहीं करता है।

सुलह अधिकारी क्या कर सकता है और उसे क्या करना चाहिए, यह अधिनियम की धारा 12 में अंतर्विष्ट है। उप-धारा (1) सुलह अधिकारी को धारा 22 के तहत अधिसूचना के बाद सार्वजनिक उपयोगिता सेवा के मामले में सुलह कार्यवाही करने के लिए सशक्त बनाती है, जिसके द्वारा ऐसा करना उसका अनिवार्य कर्तव्य बन जाता है; और अन्य विवादों में, निर्धारित तरीके से सुलह कार्यवाही करना उसके विवेक पर निर्भर है। उप-धारा (2) के तहत उसे बिना किसी विलंब के विवाद के गुणों को प्रभावित करने वाले सभी मामलों की जांच करनी होती है, और वह ऐसे कार्य कर सकता है जो पक्षकारों को निष्पक्ष और सौहार्दपूर्ण समझौते के लिए प्रेरित करने हेतु वह आवश्यक समझे। उप-धारा (3) यह प्रावधान करती है कि यदि विवाद का समझौता हो जाता है, तो उसका प्रतिवेदन समुचित सरकार को भेजा

जाएगा, और उप-धारा (4) में भी यह प्रावधान है कि यदि कोई समझौता नहीं होता है, तो इसी प्रकार का प्रतिवेदन समुचित सरकार को भेजा जाएगा। उप-धारा (5) विवाद का समझौता न होने का प्रतिवेदन प्राप्त होने पर सरकार की शक्तियों से संबंधित है, और उप-धारा (6), जिस पर भरोसा किया गया था, यह प्रावधान करती है:—

धारा 12(6) "इस धारा के अधीन प्रतिवेदन सुलह कार्यवाहियों के प्रारंभ होने के चौदह दिनों के भीतर या ऐसी लघुतर अवधि के भीतर प्रस्तुत किया जाएगा जो समुचित सरकार द्वारा नियत की जाए।

परंतु यह कि प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के समय को ऐसी अवधि के लिए बढ़ाया जा सकता है, जिस पर विवाद के सभी पक्षकारों द्वारा लिखित रूप में सहमति व्यक्त की गई हो।

यह तर्क दिया गया था कि चूँकि सुलह कार्यवाही शुरू होने के चौदह दिनों के भीतर सरकार को प्रतिवेदन नहीं भेजा गया था, इसलिए हुआ समझौता अमान्य था और बाध्यकारी नहीं था। इस तर्क को खारिज किया जाना चाहिए क्योंकि धारा 12(6) का कोई भी उल्लंघन सुलह अधिकारी की ओर से कर्तव्य की चूक हो सकता है; इससे उन कार्यवाहियों की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता जो अधिनियम की धारा 20(2) के प्रावधानों के अनुसार समाप्त हुई हैं। इस न्यायालय द्वारा *'अंधेरी मरोल कुर्ला बस सर्विस बनाम बॉम्बे राज्य*[1]*'* में ऐसा ही अभिनिर्धारित किया गया था। अतः, यह नहीं कहा जा सकता कि 18 मार्च, 1954 को जो समझौता हुआ था, वह एक वैध विधिक समझौता नहीं था और इसके उल्लंघन पर अधिनियम की धारा 29 के दंडात्मक प्रावधान लागू नहीं होंगे।

न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा मामले का निर्णय किए जाने के बाद, पक्षकारों के बीच 6 अक्टूबर, 1956 को एक नया समझौता हुआ, जिसमें यह उल्लेख था:

"कि आज दिनांक 6 अक्टूबर, 1956 को पटना में किया गया यह समझौता, श्रमिकों की किसी भी प्रकार की सभी लंबित शिकायतों और/या माँगों का निपटारा करता है।"

---

1 (1959) पूरक एस.सी.आर. 734.

इसके परिणामस्वरूप, सेवामुक्त किए गए श्रमिकों में से 25 श्रमिकों को, जिनके नाम समझौते के साथ संलग्न परिशिष्ट 'ए' में दिए गए हैं, 8 अक्टूबर, 1956 से सेवा में बहाल कर दिया गया। अन्य सेवामुक्त श्रमिकों के संबंध में किए गए दावे को वापस ले लिया गया। इस समझौते को औद्योगिक अधिकरण द्वारा 10 अक्टूबर, 1956 के आदेश के माध्यम से स्वीकार कर लिया गया। यह दर्शाता है कि पक्षकारों के बीच सभी विवाद सुलझ गए हैं और श्रमिकों को बहाल कर दिया गया है। इसे देखते हुए, *'बिहार राज्य बनाम हीरालाल केजरीवाल'*[2] के मामले में न्यायमूर्ति सुब्बा राव के शब्दों में, "जनहित के लिए यह आवश्यक नहीं है कि पुराने पड़ चुके मामले को पुनर्जीवित किया जाए।" इसलिए, हम अनुच्छेद 136 के तहत उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करना आवश्यक नहीं समझते।

अतः अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज।

खंडन *(डिस्क्लेमर)*- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।

2 [1960] 1 एस.सी.आर. 726, 736.